International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2016; Page No. 57-58

भीष्म साहनी के उपन्यास और सामाजिक यथार्थ

सुशील कुमार तिवारी

शोध-छात्र, महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, महाराष्ट्र, भारत

प्रस्तावना

मुख्य बिन्दु

- भीष्म साहनी का समय एवं लेखन की प्रकृति
- भीष्म साहनी का उपन्यास लेखन
- उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ
- निष्कर्ष

साहित्यकार के कृतित्व को उसके जीवनानुभवों से पृथक करके नहीं आँका जा सकता । निःसंदेह साहित्यकार परिस्थिति एवं परिवेश की उपज होता है । बहुमुखी प्रतिभा के धनी भीष्म साहनी ऐसे ही साहित्यकार थे, जिनहोने आंखों देखे समाज के यथार्थ को अपने साहित्य में बारीकी से उकेरा है । उनके समय का भारतीय समाज आजादी और उसके ठीक बाद का है । यह समय सांप्रदायिक दंगों, धर्माडम्बरों, सामाजिक विषमताओं, सांस्कृतिक विभेदों तथा विभाजन की त्रासदी का है । साथ ही ब्रिटिश अधीनता तथा उससे मुक्ति का भी है । लेखक ने आजादी के पूर्व तथा आजादी के समय तथा उसके बाद के जीवन को न केवल देखा वरन उसके सक्रिय भोक्ता भी रहे है ।

भीष्म साहनी को लेखन के क्षेत्र में प्रगतिशील लेखन परंपरा से जोड़कर देखा जाता है । जिस प्रकार का उनका लेखन है उससे वे साफ़तौर पर प्रेमचंद और यशपाल के उत्तराधिकारी के रूप में भी देखे जा सकते है । अपने लेखन के द्वारा समाज उन्होने समाज के आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकार के जीवन को तथा उसके यथार्थ को लोगों के सामने रखा । उन्होने समाज में विद्यमान स्त्री-पुरुष असमानता, शोषण के खिलाफ आवाज उठाई तथा भारतीय समाज में सांप्रदायिकता तथा विभाजन की त्रासदी को लोगों के सामने रखा । अन्याय के खिलाफ आवाज बुलंद करने के अपने रास्ते से कभी हटे नहीं, चाहे वह उनके घर का आर्य समाजी वातावरण रहा हो य देश विभाजन की पीड़ा- भीष्म साहनी ने इन सभी को अपने कथा साहित्य में उकेरा । इसके साथ ही अपने समय के महत्वपूर्ण मुद्दों को विस्तृत धरातल पर देखने समझने का कार्य भी किया ।

उपन्यास लेखन के क्षेत्र में भीष्म जी का विशेष योगदान है ।आपने 'झरोखे' (1967), 'कड़ियाँ' (1970), 'तमस' (1973), 'बसंती' (1980), 'मय्या दास की माड़ी' (1988), 'कुन्तों' (1993), 'नीलू, नीलिमा, नीलोफर' (2000), आदि उपन्यासों के माध्यम से भारतीय समाज की विभिन्न प्रकार की समस्याओं को उठाया है ।

'झरोखे' उपन्यास के माध्यम से उन्होने एक बालक के माध्यम से निम्न मध्यवर्गीय परिवार के दुखों-पीड़ाओ का अंकन किया है । इसमें पंजाब के आर्य समाजी परिवार को केंद्र में रखकर मध्यवर्गीय परिवेश की सृष्टि की गयी है जिसमें एक रूढ़िबद्ध, संस्कारगत जड़ता से ग्रस्त परिवार की नीरसता एवं द्वंद्व को इस उपन्यास में उभारा गया है । धार्मिक एवं सामाजिक विसंगतियों, ऊँचनीच, अमीर-गरीब का भेद तथा नौकरशाही जैसी समस्याओं का चित्रण भी उपन्यास में है । निम्न मध्यवर्गीय परिवेश जी रही स्त्री के शारीरिक और मानिसक शोषण की ओर भी लेखक ने ध्यान दिया है । परंपरागत परिवार में संपत्ति के अधिकार तथा आर्थिक साधनों से रहित स्त्री, पुरुषों की इच्छा के अधीन अपनी सलामती की दुआ जपती रहती । माँ-पिताजी से झगड़ा बढ़ने पर अपनी तकलीफ को इस प्रकार प्रकट करती है, "मैंने तुम्हारे साथ कौन सा सुख पाया है ? तुम मुझे सदा कलपाते रहे हो?... हे भगवान मुझे उठा ले ... अंतत: धीरज धरकर बै ठ जाती है । घर में काम करनेवाला नौकर तुलसी जब पढ़ना चाहता है तो उसका कड़ा विरोध किया जाता है, साथ ही चोरी का इल्जाम भी लगाया जाता है ।

'कड़ियाँ' आधुनिक समाज के बदलते पारिवारिक और वैवाहिक जीवनमूल्यों की ओर संकेत करने वाला ऐसा उपन्यास है जिसमे स्त्री और पुरुष जीवन को जीते नहीं बल्कि उसे बोझ की तरह ढोते हुए प्रतीत होते हैं ।इस उपन्यास का मुख्य कथ्य दाम्पत्य संबंध की कटुता और स्त्री की असहाय स्थिति से सम्बद्ध है ।

इस उपन्यास के प्रमुख पात्र महेंद्र और प्रमिला नितांत दो भिन्न विचारों तथा संस्कारों वाले पात्र हैं । महेंद्र जहां आधुनिकता के रंग में रंगा हुआ फैशनपरस्त और आशिकमिजाज है वही उसकी पत्नी प्रमिला नितांत घरेलू और परंपरागत विचारों वाली महिला है । उपन्यास में प्रमिला के प्रति अपनी उदासीनता और अहम के चलते वह प्रमिला को तरह –तरह के कष्ट देता है यहाँ तक कि बच्चे को बोर्डिंग स्कूल में डालकर पत्नी को घर से भी निकाल देता है । यही नहीं वह अपने दूसरे बच्चे को स्वीकार करने से भी इंकार कर देता है । प्रमिला इन सारे शोषणों को सहती हुई अपने बच्चों की परवरिश करती है ।

यह उपन्यास स्त्री कि आत्मनिर्भरता के अभाव में पुरुष की बढ़ती हुई निरङ्कुशता और उसके परिणामस्वरूप परिवार के विघटन का आख्यान है । इस प्रकार यह उपन्यास पुरुष प्रधान समाज में स्त्री पर होने वाले जुल्मो को पर्याप्त विश्वसनीयता से अंकित करता है ।

उपन्यासकार के रूप में भीष्म साहनी को स्थापित करने वाला उपन्यास 'तमस' है। इस उपन्यास के द्वारा लेखक ने सांप्रदायिकता के सवाल को पूरी शिद्दत से उठाया है । इस उपन्यास में स्वतन्त्रता के पूर्व पंजाब में हुए सांप्रदायिक दंगे तथा उससे जुड़ी क्रूरताओं का अंकन हुआ है । यहाँ एक बात जो स्पष्ट समझ लेनी चाहिए वह यह कि इससे पूर्व यशपाल ने झूठा सच लिखा था जो विभाजन के समय की सांप्रदायिक त्रासदी का अंकन एक विस्तृत महाकाव्यात्मक धरातल पर करता था किन्तु यशपाल और भीष्म साहनी के उपन्यास लेखन में अंतर भोगे हुए यथार्थ का है । यशपाल ने जहां इसे देख-सुन कर प्राप्त जानकारियों के आधार पर लिखा था वहीं यह भीष्म का भोगा हुआ यथार्थ था वे स्वयं इस अमानवीय घटना के भोक्ता थे ।

उपन्यास में भीष्म जी ने न केवल सांप्रदायिकता का विश्वसनीय चित्रण किया है अपितु उन कारणों की की भी तलाश की है जो देश के विभाजन और सांप्रदायिकता के मूल में थे । तमस नाम ही उस अंधकार को द्योतित करता है जो आदमी के भीतर की इंसानियत और संवेदना को धक लेता है और मनुष्य को हैवान बना देता है । अपने इस उपन्यास में भीष्म जी ने यह दिखाया है कि आजादी के पूर्व के यह दंगे आकस्मिक नहीं थे अपितु इसके पीछे एक पूरा सुनियोजित तंत्र कामकर रहा था । उन्होने यह स्पष्ट रूप से दिखाया है कि

सांप्रदायिकता की आग फैलाने में ब्रिटिश शासन तथा राजनीतिक स्वार्थों से प्रेरित हिन्दू और मुस्लिम दोनों धर्मों के चंद लोगों की साजिश थी।

दंगे की शुरुआत अंग्रेज़ अफसरसाही के इशारे पर मुराद अली द्वारा नत्थू से सूअर मरवाकर मस्जिद की सीढ़ियों पर दलवा देने से होती है। जिसके बाद उपजे अविश्वास, आशंका और धर्मोन्माद से सैकड़ों साल से साथ–साथ एक ही मुहल्ले में जी रहे अलग–अलग धर्मों के हिंदुस्तानी लोगों की आपसी सहिष्णुता, भाईचारा, प्रेमव्यवहार सब के सब धरे रह जाते हैं। बचता है तो सांप्रदायिक अमानवीयता का एक नंगा चेहरा, जिसको जिंदा रखकर अंग्रेज़ स्वयं को बनाए रखने की जुगत कर रहे थे।

यहाँ ध्यान देने योग्य एक बात और है वह यह कि इस दंगे में हिन्दू या मुसलमान दोनों ही ओर से कोई नेता नहीं मरता, मरता है फ़तहचंद की ताल पर काम करने वाला मजदूर कश्मीरी हत्तो, गली–गली दूध बेचने वाला मियां, बूढ़ा हरभजन सिंह और इकबाल सिंह, तबाह होते हैं सैदपुर जैसे गाँव जहां के पुरूष यदि मारे जाते हैं तो औरतें बच्चों को लेकर कुएं में कूद जाती हैं। इन दंगों से सिर्फ कोई एक घर नहीं लाखों की संख्या में तबाह होते है दसों लाख बेघर होते हैं। इस पूरी घटना प्रक्रिया को भीष्म जी पूरी मानवीयता से जोड़कर दिखाते हैं।भीष्म जी के लेखन की खासियत यह भी है कि इतनी बड़ी अमानवीय तथा क्रूरता भरी घटना को वर्णित करते हुए भी बीच–बीच में मानवीय संवेदना और इंसानियत कि झलक देते जाते है। एहसान अली की घरवाली राजो या करीम खान जैसे नेक आदमी हैवानियत के सारे दबाओ को झेलते हुए भी मानवीयता को बचाए रखते हैं। इस प्रकार यह उपन्यास समाज के यथार्थ को व्यक्त करने वाले उपन्यासों में मील का पत्थर सिद्ध होता है।

'बसंती' उपन्यास में भीष्म जी ने दिल्ली महानगर को केंद्र में रखकर वहाँ बसने वाली दो तरह की दुनियाओं के मध्य के यथार्थ को चित्रित किया है। एक दुनिया वह जो यहाँ की स्थायी कालोनियों और विहारों में बसती है तथा दूसरी वह जो यहाँ काम की तलाश में आए लोगो की है और किसी भी खाली सरकारी जमीन पर झोपड़ी बनाकर अपने जीवन को जीने की कोशिश में लगे होते हैं।यह बस्ती शहर के उन लोगों की होती है जो यहाँ मजदूरी करने वाले होते हैं इसमे कितने ही पेशे के लोग शामिल होते हैं। इनकी तरफ सरकार पहले तो ध्यान नहीं देती किन्तु जैसे ही ये बस जाती हैं इन्हे उजाड़ने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। भीष्मजी इस पूरी घटना प्रक्रिया को एक मानवीय नजरिए से चित्रित कर व्यवस्था पर यह सवाल खड़े करते हैं कि क्या इन्हें रहने के लिए किसी आश्रय की जरूरत नहीं।

भीष्म जी ने अपने इस उपन्यास में झुग्गी –झोपड़ियों में रहने वाले लोगों की दैनिक चिंताओं से लेकर, इनके पारिवारिक, आर्थिक समस्याओं तथा नैतिक मूल्यों के संकट का विश्वसनीय और मार्मिक चित्रण किया है। भीष्म जी ने इनके जीवन तथा व्यवस्था से टकराव की त्रासदी को इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है। इसी परिवेश में उपन्यास की मुख्य पात्र बसंती की तस्वीर सामने आती है जो वर्तमान व्यवस्था से अपने जीने का हक मांगने की मुद्रा में पूरे उपन्यास में उपस्थित है। यहाँ यदि मधुरेश की शब्दावली में कहें तो ''बसंती उजड़ने और बसने का प्रतीक है, अपनी बस्ती की तरह''।[1] वह बार –बार व्यवस्था के शोषण का शिकार होती है पर इन सबके बावजूद हार नहीं मानती। उसकी जिजीविषा और जीवन में आस्था व्यवस्था के शोषण के सामने अजेय है।

भीष्म जी ने अपना उपन्यास 'मय्यादास की माड़ी' में अतीत को केंद्र में रखा है किन्तु वे उसके प्रति किसी मोह या भावुकता से वें मुक्त हैं। उन्नीसवीं सदी के पंजाब के एक कस्बे को इस उपन्यास के केंद्र में रखकर पंजाब पर अंग्रेजों की लूट-खसोट, अंग्रेजों के प्रति स्वामिभक्ति तथा नीचता की हद तक पहुँच चुके जमींदारों द्वारा किसानों और मजदूरों के शोषण को दिखाया है। दीवान मय्यादास की माड़ी में रहने वाले बाशिंदों के माध्यम से लेखक कई पीढ़ियों की तथा उनके मध्य होने वाले सामाजिक, राजनीतिक परिवर्तनों को पूरी विश्वसनीयता और कुशलता के साथ अंकित करता है। यथार्थ को पकड़ने और सिरजने की उनकी यह क्षमता बेजोड़ है। इस उपन्यास में खालसा राज के पतन से लेकर ब्रिटिश हुकूमत की स्थापना और जनता के प्रतिरोध का अंकन बहुत ही संयत और कलात्मक ढंग से करते हैं।

कुन्तो उपन्यास में नायिका कुन्तों के माध्यम से नारी-नियति को परिभाषित करने की कोशिश लेखक की रही है। बहुत कुछ यह अर्थो में यह उन्के उपन्यास कड़ियाँ का विकास माना जा सकता है। अशिक्षा और अज्ञान, परंपरागत स्त्री मूल्यो के कारण आर्थिक रूप से पति पर निर्भर स्त्री को पुरुषों की हर ज़्यादतियों को सहना पड़ता है चाहे वह उनकी व्यभिचारिता हो क्यों न हो ? यहाँ महत्वपूर्ण बात यह है कि भीष्म जी स्त्री जीवन से जुड़े मुद्दों को उठाते तो हैं किन्तु उस ऊंचाई तक नहीं ले गए है जहां से उपन्यास एक विशिष्ट कृति की निर्मिति होती है।

'नीलू नीलिमा नीलोफर' उपन्यास में लेखक ने मजहब के नाम पर मानवीय प्रेम के दमन की कहानी को प्रस्तुत किया है। यह मजहबी उन्माद इतना ज्यादा है की व्यक्ति इसके पीछे अपनी बेटी की जिंदगी तबाह करने में भी पीछे नहीं रहता।

उपर्युक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट रूप से सामने आती है कि भीष्म जी ने समाज के यथार्थ को पूरी तल्खी एवं विश्वसनीयता से सर्जनात्मक रूप दिया है। उन्होने समाज की नसों में दौड़ रहे कुलबुलाते यथार्थ को पकडा है और उसकी बहुरूपी अभिव्यक्ति की है। इस यथार्थ की अभिव्यक्ति में उनका अपना भोगा हुआ तथा देखा हुआ दोनों ही प्रकार का अनुभव प्रकट हुआ है। अपने समय को अपने कथा साहित्य में अभिव्यक्त करने में वे पूरी तरह सफल रहे है यही उनके उपन्यासकार होने की महत्वपूर्ण सफलता है जो उन्हे भीड़ के बीच एक विशिष्ट पहचान दिलाती है।

संदर्भ सूची

1. मधुरेश, (१९९८), हिन्दी उपन्यास का विकास, तृतीय संस्करण २००४, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. राय गोपाल, (२००२), हिन्दी उपन्यास का इतिहास, प्रथम आवृत्ति २००९, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।